पञ्च कल्याणक :
क्या,
क्यों,
कैसे ?

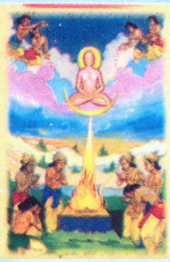

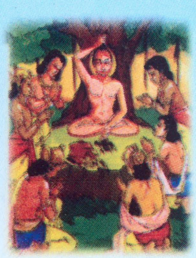

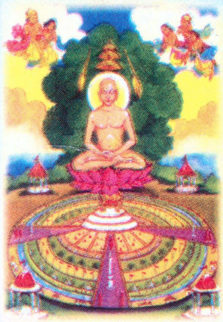

पञ्च कल्याणक :
क्या, क्यों, कैसे?

सङ्कलन एवं सम्पादन :
डॉ० राकेश जैन शास्त्री
नागपुर

प्रकाशन सहयोग :
श्री बालचन्द, तेजमल पटवारी परिवार
कोटा (राजस्थान)

प्रकाशक :
तीर्थधाम मङ्गलायतन
श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट
अलीगढ़-आगरा मार्ग, सासनी-204216 (भारत)

चतुर्थ आवृत्ति : 5,000 प्रतियाँ

मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव 16 दिसम्बर से 23 दिसम्बर 2010 के अवसर पर

Available At -

INDIA

— **Teerthdham Mangalayatan,** Sasni-204216, Aligarh (U.P.)
e-mail : info@mangalayatan.com

— **Pandit Todarmal Smarak Bhawan,**
A-4, Bapu Nagar, Jaipur-302015 (Raj.)

— **Shri Hiten A. Sheth,** Shree Kundkund-kahan Parmarthik Trust
302, Krishna-Kunj, Plot No. 30, Navyug CHS Ltd.,
V.L. Mehta Marg, Vile Parle (W), Mumbai - 400056
e-mail : vitragva@vsnl.com / shethhiten@rediffmail.com

— **Shri Kundkund Kahan Jain Sahitya Kendra,** Songarh (Guj.)

U.S.A.

— **SECRETARY,** DIG. JAIN SWADHIAYA MANDIR SONGARH
304, Tall Oak Trail, Tarpon Springs, Florida 34688, U.S.A.
e-mail : kahanguru@hotmail.com

— **DR. KIRIT P. GOSALIYA**
14853, North 12th Street, Phoenix, Arizona, 85022 U.S.A.
e-mail : digjain@aol.com

— **Smt. JYOTSANA V. SHAH**
602, Hamilton Ave., Kingston, PA 18704-5622, U.S.A.
e-mail : jyotsana2@yahoo.com

U. K.

— **PRESIDENT,** SHRI DIGAMBER JAIN ASSOCIATION
1, The Broadway, Wealdstone, Harrow,
Middlesex, HA3 7EH, U.K. e-mail : sdjauk@yahoo.com

— **SMT. SHEETAL V. SHAH**
Flat No. 9, Maplewood Court, 31-Eastbury Ave.,
Northwood, Middlesex, HA6 3LL, U.K.
e-mail : sheetalvs@aol.com

KENYA

— **PRESIDENT,** DIG. JAIN MUMUKSHU MANDAL-NAIROBI
M/s. Coblantra Ltd., G.P.O. 00100, P.O. Box - 41619,
Nairobi, Kenya e-mail : spraja@mitsuminet.com

अनुक्रमणिका

मङ्गल अवसर	4
प्राक्कथन	6
पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन	8
पञ्च कल्याणक : क्या, क्यों, कैसे?	12
पञ्च कल्याणक का एक-एक मन्त्र कल्याणकारी	29
विधिनायक भगवान श्री आदिनाथस्वामी	32

मङ्गल अवसर

यह पञ्च-कल्याणक महोत्सव तीन लोक के जीवों में आनन्द की अनुभूति होने का महा-मङ्गलमय अवसर है। इस महा-महोत्सव में वीतरागी परमात्मा का मङ्गल सन्देश प्रसारित होता है; यह महोत्सव सभी जीवों के कल्याण में परम निमित्त होता है; परम सत्य दिव्यध्वनि में जीवों के परिणामोंरूप पाँच भावों की सुमधुर चर्चा सुनने-समझने का अवसर मिलता है।

इस महोत्सव में जीव के परिणामों का अद्‌भुत चमत्कार प्रत्यक्ष देखने को मिलता है, यथा - उत्कृष्ट शुभपरिणामों में अर्थात् सोलह कारण भावनापूर्वक जीव तीर्थङ्कर होता है और निर्मल वीतराग परिणति से जीव, परमात्मा हो जाता है; अनन्त चतुष्टय प्रकट होकर नव केवल लब्धियों का अद्‌भुत, अनुपम, सर्वोत्कृष्ट रस भोगता है; सादि-अनन्त सुख की दशा में अनुपम अतीन्द्रिय सुख का भोक्ता होता है।

जगत के जीव तो संयोग देखते हैं। संयोग से और संयोगीभाव से भी भिन्न अन्दर चेतन की निर्मलपरिणति और निर्मलरस के समुद्र भगवान आत्मा का दर्शन कैसे हो? यह भी इसी पञ्च-कल्याणक महोत्सव से पता चलता है।

अनादि से ही अशुद्धभावों में रचा-पचा जीव, इस महोत्सव में शुद्धभाव के मङ्गल गीत सुनता है; शुद्धभाव से परिचित होता है; परम पवित्र रत्नत्रय के मार्ग में स्वयं को लगाने के लिए प्रयत्नशील होता है।

स्वर्ग के देवों का अद्‌भुत उल्लास, अनुपम उत्साह, अपार उमङ्ग, उत्कृष्ट जिनेन्द्रभक्ति, विशिष्ट विनम्रता और स्वयं के कल्याण की -

मोक्षमार्ग की भव्य भावना, इस महोत्सव में देखने को मिलती है। इन्द्रसभा में देव और देवियों की मार्मिक तत्त्वचर्चा, अनके शङ्काओं का समाधान तो करती ही है, साथ ही हमें भी स्वाध्याय करने की प्रेरणा प्रदान करती है।

पालना-झूलन में उत्साह की पराकाष्ठा, बाल तीर्थङ्कर को झूलाने की भावना, देव-शास्त्र-गुरु के प्रति उत्कृष्ट भक्ति जगाती है।

समवसरण में जीवमात्र के लिए हितकारी अद्भुत तत्त्वज्ञान की वर्षा होती है। भगवान के मुखारविन्द से भेद-विज्ञान का स्पष्ट, अकाट्य, परम सत्य मन्त्र सुनकर, समझकर, भेद-विज्ञानी होकर तथा वीतारगी मार्ग में श्रद्धावन्त होकर, जीव मुक्तिपथ पर आरूढ़ होता है।

पञ्च-कल्याणक महोत्सव के निमित्त से जीव समतारस, ज्ञानरस, शान्तरस का अद्भुत अमृतरस पीते-पीते, अनन्त सुखामृत सागर में तल्लीन हो जाता है।

विश्व धरा के प्रथम जैन विश्वविद्यालय मङ्गलायतन विश्वविद्यालय की पावन धरा पर होनेवाला यह मङ्गल महा -महोत्सव हमारे तारणहार परमपूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के पुण्य प्रभावनायोग से अत्यन्त प्रेरणादायी है। सभी साधर्मीजन इस मङ्गल महोत्सव में उत्साह से भाग लेकर ज्ञानामृत पीते हुए वीतरागभाव की वृद्धि करें - यही भावना है।

दिनाङ्क :

पवन जैन

तीर्थधाम मङ्गलायतन

अलीगढ़।

प्राक्कथन

पञ्च-कल्याणक महा-महोत्सव दिगम्बर जैन समाज का सर्वाधिक लोकप्रिय उत्सव है। इस महोत्सव में उन मुक्ति-साधक महान आत्माओं की गर्भवास से लेकर मुक्ति प्राप्ति तक की घटनाओं का स्थापना-निक्षेप के आधार पर प्रदर्शन किया जाता है, जो तीर्थङ्कर होते हैं। यह सम्पूर्ण प्रदर्शन राग से विरागता और अपूर्णता से पूर्णता के शाश्वत् मार्ग का परिचायक है।

सनातन नियमानुसार अनादि-अनन्त काल प्रवाह के चौथे काल में चौबीस तीर्थङ्करों का जन्म होता है और वे अपनी पूर्वभव से आराधित आराधना की पूर्णता इस भव में प्राप्त करते हैं। पूर्व भवों में ही आन्तरिक वीतराग परिणति के साथ-साथ उनकी परिणति में लोकमाङ्गल्य की करुण सरिता प्रवाहित होती है, जिसके फलस्वरूप उन्हें सर्वोत्कृष्ट पुण्य प्रकृति तीर्थङ्कर नामकर्म का बन्ध होता है। यद्यपि वे धर्मात्मा उस पुण्यभाव और तीर्थङ्कर प्रकृति के प्रति किञ्चित् भी व्यामोहित नहीं होते, वे उसके प्रति उपेक्षाभाव ही रखते हैं; तथापि उनकी उपेक्षित प्रकृति भी लोककल्याण की अद्भुत निमित्त बन जाती है।

उन महापुरुषों के जीवन की पाँच प्रमुख घटनाएँ - गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और मोक्ष कल्याणस्वरूप और कल्याणकारक होने से कल्याणक कहलाती है और सम्पूर्ण घटनाएँ पाँच होने से पञ्च कल्याणक कहलाती हैं।

यद्यपि गर्भ में आना और जन्म लेना तो कलङ्क है, तथापि जिस गर्भवास और जन्म के बाद सदा के लिए जन्म-मरण से छुटकारा प्राप्त हो जाए, उस गर्भ और जन्म को भी कल्याणक कहा जाता है।

जैन पुराणों में प्राप्त इन तीर्थङ्करों की गौरव गाथाएँ बतलाती है कि इन महापुरुषों ने भी अपने पूर्वभवों में आत्मस्वभाव की विराधनारूप मिथ्यात्व के

कारण भव–वन में परिभ्रमण किया है और कालान्तर में अपने आत्मोन्मुखी पुरुषार्थ द्वारा मनुष्यपर्याय से ही नहीं, सिंह और हाथी इत्यादि तिर्यञ्चपर्याय से भी अपने आत्मकल्याण का मङ्गल प्रारम्भ किया है।

इन घटनाओं के अनुशीलन से हमें किसी भी प्राणी की दीन–हीन दशा में भी उसके प्रति जुगुप्सा का भाव पैदा नहीं होता, साथ ही अपनी दीन–हीन दशा में भी आत्मबल खण्डित न होकर, आत्मोन्मुखी पुरुषार्थ का प्रचण्ड वेग जागृत होता है।

हमारे तारणहार पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी तो 'पञ्च कल्याणक का साक्षात दर्शन, सम्यग्दर्शन का निमित्त है' – ऐसा कहकर इस महोत्सव की अद्भुत महिमा गाते हैं।

इस महोत्सव में होनेवाला प्रत्येक कार्यक्रम मुक्तिमार्ग का सुर–सङ्गीत सुनाता सा प्रतीत होता है। आईये! हम भी इस महा–महोत्सव में शामिल होकर मुक्ति का रिजर्वेशन करायें।

इस महोत्सव के सम्बन्ध में उत्पन्न होनेवाले विविध प्रश्नों एवं उसके सुन्दर समाधान का यह सङ्कलन हमारे साथी डॉ० राकेश जैन 'शास्त्री' ने किया है एवं भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) के जीवन पर आधारित प्रश्नोत्तरों का सङ्कलन पण्डित संजय जैन शास्त्री द्वारा किया गया है – तदर्थ वे साधुवाद के पात्र हैं।

इस सङ्कलन को उपयोगी बनाने में श्री पवन जैन, अलीगढ़ का श्रम भी अनुमोदनयोग्य है। प्रस्तुत सङ्कलन का अध्ययन करके, आप **मङ्गलायतन विश्वविद्यालय** में होने जा रहे तीर्थङ्कर भगवान श्री आदिनाथ पञ्च–कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में अवश्य पधारें और अपने सम्पूर्ण प्रश्नों के समाधान प्रत्यक्ष में प्राप्त कर आत्महित के मार्ग में लगें – यही भावना है।

दिनाङ्क :

देवेन्द्रकुमार जैन
तीर्थधाम मङ्गलायतन
अलीगढ़।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी का माङ्गलिक प्रवचन

‘आत्मा में सिद्धत्व की स्थापना का महा-महोत्सव’

आज तीर्थङ्कर अरहन्त भगवान की प्रतिष्ठा का मङ्गल दिवस है। इस प्रतिष्ठा-महोत्सव में आत्मा के स्वभाव की प्रतिष्ठा करने की बात है। इस जीव ने विकार को अपना मानकर अनादिकाल से अपने विकार की प्रतिष्ठा की है परन्तु विकार से भिन्न चैतन्यस्वभाव को जानकर, अपने में सिद्ध समान चैतन्य-स्वभाव की प्रतिष्ठा करना धर्म है, इस तथ्य को अन्तरङ्ग से स्वीकार नहीं किया है।

‘मैं विकार नहीं हूँ; मैं अखण्ड चैतन्यस्वभाव हूँ’ - ऐसे भान द्वारा अरहन्त भगवान ने अपने आत्मा में चैतन्यस्वभाव की प्रतिष्ठा करके, उसमें लीन होकर राग-द्वेष का अभाव करके केवलज्ञान प्रकट किया; यह उन्हीं की स्थापना है। जो जीव अरहन्तों के समान अपने आत्मा में चैतन्य भगवान की प्रतिष्ठा करता है, वह भगवान हुए बिना नहीं रहता। अपने आत्मा में चैतन्यप्रभु की स्थापना करना ही परमार्थ स्थापना है; बाहर में भगवान की स्थापना तो उपचार से है।

पञ्च कल्याणक की बाह्य क्रियाएँ तो उनके स्वकाल में हुई हैं। देखो! यह चैतन्यप्रभु की लीला है कि वह स्व को जानते हुए पर को जान लेता है परन्तु पर में कुछ करे – ऐसी उसकी लीला नहीं है।

इस स्वाध्याय मन्दिर में ग्रन्थाधिराज समयसार की प्रतिष्ठा हुई है, उसमें मङ्गलाचरण करते हुए श्री कुन्दकुन्दभगवान सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार करते हैं –

वंदित्तु सव्वसिद्धे धुवमचलमणोवमं गदिं पत्ते।
वोच्छामि समयपाहुडमिणमो सुदकेवली भणिदं ॥1॥

ध्रुव अचल अरु अनुपम गति, पाये हुए सब सिद्ध को,
मैं वंद श्रुतकेवलिकथित, कहूँ समयप्राभृत को अहो ॥1॥

यहाँ समयसार के प्रारम्भ में ही आचार्य भगवान अन्तर में सिद्धत्व का वैभव परोसते हैं; आत्मा में सिद्ध भगवान की स्थापना करते हैं – यही समयसार की सच्ची प्रतिष्ठा है। समयसार, अर्थात् शुद्ध आत्मा। 'मैं राग हूँ' – ऐसी मिथ्या-मान्यता छोड़कर, **'मैं सिद्ध समान शुद्धात्मा हूँ'** – ऐसी प्रतीति करके अपने में शुद्धात्मा की स्थापना करना ही समयसार की सच्ची प्रतिष्ठा है।

इस गाथा में आचार्यदेव कहते हैं कि **'हे जीवों! मैं सिद्ध हूँ और तुम भी सिद्ध हो, तुम्हारे आत्मा में सिद्धपना समा जाए – ऐसी ताकत है। जो ज्ञान, सिद्धों को जानकर अपने में सिद्धपने की स्थापना करता है, उस ज्ञान में सिद्ध जैसी सामर्थ्य है। वह राग या अपूर्णता का आदर नहीं करता तथा अपने को पर का कर्ता और पर को अपना कर्ता नहीं मानता, अपितु अपने स्वभाव में ढलकर अनुक्रम से सिद्धदशा प्रकट करके भव-भ्रमण का नाश कर देता है।'**

इस काल में भरतक्षेत्र के जीवों को साक्षात् सिद्धदशा नहीं है परन्तु किसी महा-भाग्यवन्त मुनि को चारित्रदशा प्रकट होती है तथा **'मैं सिद्ध हूँ, मैं सिद्ध हूँ'** – इस प्रकार सिद्धत्व का ध्यान करके वे दो-तीन भव में

मुक्ति प्राप्त करते हैं। सम्यग्दृष्टि गृहस्थ भी अपने आत्मा में सिद्धत्व की स्थापना करके दो-तीन भव में मोक्षगामी हो जाते हैं। आचार्यदेव तो सभी आत्माओं को सिद्धपने ही देखते हैं क्योंकि स्वयं को सिद्धत्व की रुचि है और अल्पकाल में सिद्ध होना है।

यहाँ यह बताया जा रहा है कि **भगवान ने क्या करके मोक्ष प्राप्त किया? भगवान ने परजीवों का कुछ नहीं किया परन्तु सर्व प्रथम अपने आत्मा में भेदज्ञान प्रकट किया।** यहाँ श्रीसमयसार में श्रीकुन्दकुन्दाचार्यदेव भेदज्ञान को ही मोक्ष का उपाय बता रहे हैं –

णादूण आसवाणं असुचित्तं च विवरीय भावं च।
दुक्खस्स कारणं ति य तदो णियत्तिं कुणदि जीवो ॥ 72 ॥

अशुचिपना, विपरीतता ये आस्रवों का जानके।
अरु दुःखकारण जानके, इनसे निवर्तन जीव करे ॥ 72 ॥

आत्मा, नित्य ज्ञानानन्दस्वभावी पवित्र वस्तु है। उसकी अवस्था में जो शुभाशुभराग होता है, वह अशुचिरूप है। जैसे, पानी में उत्पन्न होनेवाली काई, पानी का स्वभाव नहीं है; उसका मैल है, वैसा ही आत्मा की अवस्था में होनेवाले पुण्य-पापभाव आत्मा के स्वभाव नहीं हैं, बल्कि उसकी मलिनता है, अशुचिता है।

आत्मा के ज्ञानस्वभाव का अनुभव करने पर वह पवित्र आत्मा अनुभव में आता है तथा पाप-पुण्य के भाव, आत्मा के मैलरूप से अनुभव में आते हैं। शरीर अशुचि है परन्तु वह तो आत्मा से अत्यन्त भिन्न है, जड़ है। आत्मा की अवस्था में होनेवाला पुण्य-पापरूप राग भी अपवित्र है, मैल है, अशुचि है और ज्ञानानन्द की मूर्ति भगवान आत्मा पवित्र है, निर्मल है, शुचि है। इस प्रकार आत्मा और विकार को भिन्न-भिन्न जानकर, आत्मा विकार से पीछे हटकर स्वभाव की तरफ झुकता है। विकार से निवृत्त होने पर आत्मा को कर्मबन्धन नहीं होता। इस प्रकार **आत्मा और विकार का भेदज्ञान ही मुक्ति का उपाय है।**

भगवान ने ऐसा ही स्व-पर का भेदज्ञान करके निर्वाण प्राप्त किया है और इसलिए आज हम उनका पञ्च-कल्याणक मना रहे हैं।

जहाँ जिसकी रुचि हो, वहाँ वह भेद नहीं करता परन्तु अखण्ड मानता है। जिस प्रकार किसी व्यक्ति के पास एक लाख की सम्पत्ति हो और उसके चार बेटे हों तो प्रत्येक बेटा ऐसा अनुभव करता है कि हमारे पास एक लाख की सम्पत्ति है; उसी प्रकार जिसे पूर्णस्वभाव की रुचि है, वह अपने को पूर्ण अनुभव करता है; भेद नहीं करता।

जिस प्रकार कुँवारी कन्या की सगाई होते ही उसका अभिप्राय पलट जाता है और जहाँ उसकी सगाई हुई है, वह उस घर को और उस वर को अपना मानती है तथा वर्तमान घर को अपना नहीं मानती; उसी प्रकार धर्मी जीव ने जब अन्तर स्वभाव के साथ सगाई की, तब तत्काल उसकी रुचि, अर्थात् उसमें अपनापन होते ही संयोगो की तथा राग की रुचि टल जाती है। राग और संयोग होने पर भी **'वे मेरे नहीं हैं; मैं सिद्ध समान शुद्धात्मा हूँ'** - इस प्रकार उसकी दृष्टि पलट जाती है। ऐसी पहचान और प्रतीति करना - यही सिद्धि का पन्थ है। इसके सिवाय और किसी उपाय से भव का अन्त नहीं आ सकता। ●

(- पञ्च कल्याणक महा-महोत्सव प्रवचन)

कौन है वीतराग का भक्त?

भगवान के कारण मुझे शुभराग हुआ; इस प्रकार जहाँ तक पर के कारण से राग होने की बुद्धि है, वहाँ तक वीतरागपना अंशमात्र भी नहीं होता तथा उस शुभराग से धर्म माननेवाले को भी किञ्चित् मात्र भी वीतरागता नहीं होती। सर्व प्रथम श्रद्धा में भी वीतरागता हुए बिना राग का अभाव कैसे होगा? आत्मा स्वयं ही पराश्रयभाव से राग करता है और स्वाश्रयभाव से राग का अभाव करके वीतरागता भी स्वयं करता है। इस प्रकार पहचानें तो स्वाश्रयतापूर्वक वीतरागता प्रगट करे। इसका नाम है वीतराग का भक्त। *(- सोनगढ़ प्रतिष्ठा महोत्सव के प्रवचनों में से)*

पञ्च-कल्याणक :

क्या, क्यों, कैसे?

प्रश्न 1 - पञ्च-कल्याणक महोत्सव क्या है?

उत्तर - जिन्होंने हमें आत्मकल्याण का मार्ग बतलाया एवं स्वयं भी उस मार्ग पर चलकर जन्म-मरण से रहित हुए, उन तीर्थङ्कर परमात्माओं के जीवन की वे पाँच घटनाएँ – गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान और मोक्ष के रूप में जानी जाती हैं, पञ्च-कल्याणक कहलाती हैं।

अनादि-अनन्त काल प्रवाह में चौथे काल में होनेवाले चौबीसों तीर्थङ्करों के जीवन की उक्त घटनाओं को देव एवं उस काल के मनुष्य, अत्यन्त हर्षोल्लासपूर्वक मनाते हैं और स्वयं भी आत्महित में लगने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

वर्तमान में साक्षात् तीर्थङ्कर परमात्माओं का विरह होने से, उनके बिम्ब पर स्थापना-निक्षेप से इन पाँचों कल्याणकों की विधि सम्पन्न की जाती है।

प्रश्न 2 - पञ्च-कल्याणक तो एकान्त में भी किया जा सकता है, उनके लिए भीड़ जुटाने की अथवा प्रचार-प्रसार की क्या आवश्यकता है?

उत्तर - सभी आत्मार्थीजन पञ्च-कल्याणक की विधि को प्रत्यक्ष देखकर अपने परिणाम उज्ज्वल बनाएँ – यही इसका उद्देश्य है।

प्रश्न 3 - पञ्च-कल्याणक को हम किस प्रकार समझ सकते है?

उत्तर - पञ्च-कल्याणक को हम अन्तर्बाह्य दृष्टि से समझ सकते हैं।

आत्महित में इस महोत्सव को निमित्त बनाना, इसका आध्यात्मिक आभ्यन्तर स्वरूप है, जो किसी भी प्रकार से विस्मृत करने योग्य नहीं है। इस उद्देश्य को मुख्य रखकर पञ्च-कल्याणक की आभ्यन्तर विधियाँ और बाह्य प्रदर्शन किया जाता है।

आभ्यन्तर विधियाँ वे होती हैं, जो प्रतिष्ठाचार्य बिना प्रदर्शन के सम्पन्न करते हैं और बाह्य विधियाँ वे होती हैं, जो जन साधारण को मञ्च के माध्यम से दिखाई जाती हैं।

आभ्यन्तर विधियों में शान्तिजाप, अङ्कन्यास, सूरीमन्त्र, प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र इत्यादि आती हैं और बाह्य विधियों में झण्डारोहण, शोभायात्रा, स्वप्नों का प्रदर्शन, पाण्डुकशिला पर अभिषेक, पालनाझूलन, राजसभा, इन्द्रसभा, दीक्षा, आहारदान, दिव्यध्वनि प्रदर्शन, निर्वाणकल्याणक का प्रदर्शन इत्यादि आता है। इन सभी विधियों का पर्याप्त परिचय तो आप पञ्च-कल्याणक के साक्षात् दर्शन से ही प्राप्त कर सकते हैं।

प्रश्न 4 - मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में नवनिर्मित इस जिनमन्दिर में मूल नायक भगवान महावीर हैं और पञ्च-कल्याणक भगवान आदिनाथ का मनाया जा रहा है? क्या इसका कोई विशेष कारण है?

उत्तर - हाँ, अनादि अनन्त काल प्रवाह में षट् कालों के परिवर्तन के अन्तर्गत चतुर्थ काल में चौबीस तीर्थङ्कर होते हैं ऐसे-ऐसे अनन्त चौबीस तीर्थङ्कर हो चुके हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे। इस काल चक्र के परिवर्तन के प्रारम्भ में प्रथम तीर्थङ्कर

भगवान आदिनाथ हुए और चौबीसवें तीर्थङ्कर भगवान महावीर हुए हैं। सामान्यतः जन सामान्य में यह धारणा प्रचलित है कि भगवान महावीर जैन धर्म के संस्थापक थे। जबकि वस्तुस्थिति इससे एकदम विपरीत है। भगवान महावीर तो इस काल की चौबीसी के अन्तिम तीर्थङ्कर हैं, प्रथम तीर्थङ्कर तो भगवान आदिनाथ ही हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आदिनाथ से महावीर की यह परम्परा मात्र इस कल्पकाल की ही परम्परा है। ऐसे-ऐसे अनन्त कल्प काल व्यतीत हो चुके हैं और आगे भी होंगे, जिनमें प्रत्येक कल्प काल में चौबीस-चौबीस तीर्थङ्कर होंगे। इस समीचीन तथ्य से परिचति कराना भी इस आयोजन का उद्देश्य है।

प्रश्न 5 - सामान्यतया सभी पञ्च-कल्याणकों में सब कुछ वही का वही होता है, इस पञ्च-कल्याणक की क्या विशेषता है?

उत्तर - यह तीर्थङ्कर प्रकृति का महाप्रताप है कि भरतक्षेत्र आदि में उत्पन्न होनेवाले तीर्थङ्कर के पञ्च-कल्याणक होते हैं,जिन्हें स्वर्ग से आकर इन्द्र आदि देवतागण मनाते हैं; अतः उन्हीं क्रियाओं को हम भी प्रदर्शित करेंगे परन्तु इससे यहाँ विशेष छटा के दर्शन आपको होंगे। इसकी तैयारी यहाँ विगत डेढ़ वर्ष से चल रही हैं।

प्रश्न 6 - आचार्य अनुज्ञा का क्या महत्त्व है।

उत्तर - पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा का मुख्य कर्णधार प्रतिष्ठाचार्य को माना गया है; अतः कार्यक्रम के प्रारम्भ में 'आचार्य अनुज्ञा' के द्वारा प्रतिष्ठाचार्य से यजमान, यज्ञनायक अथवा प्रतिष्ठाकारक व्यक्ति या समाज निवेदन करती है और प्रतिष्ठाचार्य प्रतिष्ठा करने हेतु स्वीकृति प्रदान करते हैं। प्रतिष्ठा

-पाठों में प्रतिष्ठाचार्य को आचार्य शब्द से उल्लिखित किया गया है।

प्रश्न 7 - यज्ञनायक, यजमान या प्रतिष्ठाकारक कैसा होना चाहिए?

उत्तर - 'प्रतिष्ठा-प्रदीप' में कहा है - 'न्यायोपजीवी, गुरुभक्त, अनिन्द्य, विनयी, पूर्णाङ्क, शास्त्रज्ञ, उदार, अनपवाद व उन्मादरहित, राज्य व निर्माल्य द्रव्य का हर्ता न हो, प्रतिष्ठा में सम्पत्ति का व्यय करनेवाला, कषायरहित तथा धार्मिक व्यक्ति यज्ञनायक के योग्य होता है।'

प्रश्न 8 - प्रतिष्ठाचार्य के क्या लक्षण है?

उत्तर - प्रतिष्ठा-प्रदीप के अनुसार - 'स्याद्वाद-विद्या, में निपुण, शुद्ध उच्चारणवाला, आलस्यरहित, स्वस्थ, क्रिया-कुशल, दया-दान-शीलवान, इन्द्रिय-विजयी, देव-शास्त्र-गुरु भक्त, शास्त्रज्ञ, धर्मोपदेशक, क्षमावान, समाजमान्य, व्रती, दूरदर्शी, शङ्का-समाधानकर्ता, उत्तम कुलवाला, आत्मज्ञ, जिनधर्मानुयायी, गुरु से मन्त्र-शिक्षा प्राप्त, अल्प-भोजी, रात्रि-भोजन का त्यागी, निद्रा-विजयी, निःस्पृही, परदुःखहर्ता, विधिज्ञ और उपसर्गहर्ता प्रतिष्ठाचार्य होता है।'

प्रश्न 9 - शान्तिजाप का क्या महत्व है?

समाधान - बड़े-बड़े प्रतिष्ठा, विधान आदि के कार्यों की निर्विघ्न-समाप्ति की भावना से शान्तिजाप का आयोजन किया जाता है। **इससे जाप में बैठनेवाले को विषय-कषायों से दूर रहने तथा अपनी आत्मा के निकट रहने का अवसर** मिलता है। साथ ही जाप में बैठनेवाले को आवश्यक नियम आदि का पालन करना अनिवार्य माना गया है। इसमें निर्दिष्ट मन्त्रों का शुद्ध

उच्चारण, शुद्ध पठन–पाठन करने से स्वयमेव अमङ्गल दूर होते है तथा महत्कार्य निर्विघ्न और शान्तिपूर्वक सम्पन्न होते हैं।

प्रश्न 10 – मङ्गल–कलश की स्थापना क्यों की जाती है?

उत्तर – पञ्च कल्याणक ही नहीं, प्रत्येक माङ्गलिक कार्य में मङ्गल–कलश स्थापना की जाती है क्योंकि भारतीय संस्कृति में कलश को माङ्गलिक माना गया है; अतः उसमें मङ्गल द्रव्यों का क्षेपण करके, उनकी स्थापना मण्डल–विधान आदि श्रेष्ठ स्थान पर की जाती है।

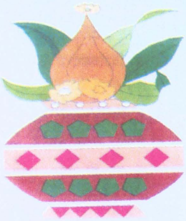

कलश–स्थापना के माध्यम से माङ्गलिक कार्य का सङ्कल्प किया जाता है। घटयात्रा आदि के समय वेदी, मन्दिर–कलश–शिखर–ध्वजशुद्धि आदि के लिए मन्त्रित जल भी कलशों में ले जाते हैं। जन्माभिषेक के समय कलशों में ही क्षीरसागर के जल की स्थापना करके ले जाया जाता है क्योंकि साक्षात् तीर्थङ्कर का जन्माभिषेक क्षीरसागर के जल से ही होता है।

प्रश्न 11 – धर्म–ध्वजारोहण क्यों कराया जाता है?

उत्तर – जिस प्रकार राष्ट्रध्वज राष्ट्र के गौरव का प्रतीक होता है; उसी प्रकार **धर्मध्वज** भी जिनधर्म के गौरव का प्रतीक है, जिनशासन की महिमा का सूचक है। जिस प्रकार भारत देश का ध्वज तिरङ्गा है; उसी प्रकार जैनधर्म का ध्वज 'पचरङ्गा' माना गया है। जैनध्वज के पाँच रङ्ग ऊपर से नीचे की ओर क्रमशः सफेद, लाल, पीला, हरा और नीला है। 'इन रङ्गों को गृहस्थों के पञ्चाणुव्रत का सूचक भी माना गया है' – ऐसा पण्डित

नाथूलालजी शास्त्री ने प्रतिष्ठा प्रदीप में लिखा है।

आदरणीय बाबू श्री जुगलकिशोरजी 'युगल' के शब्दों में कहें तो –

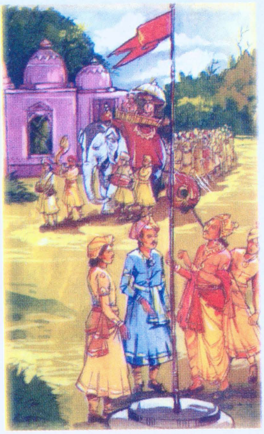

'जैसे लौकिक सुख-शान्ति के लिए लोकशासन का एक विधान होता है, जिसके अन्तर्गत नियन्त्रित एवं अनुशासित लोक-जीवन सुखी रहता है; उसी प्रकार लोकोत्तर आत्मशान्ति के लिए सन्तों ने लोकोत्तर-शासन स्वीकार किया है, जिसका एक सार्वदेशीय एवं सार्वकालिक विधान होता है और उस शासन का प्रतीक, विशिष्ट 'ध्वज' होता है।

जैनदर्शन एक ऐसा ही शासन है, जिसने विश्व के अणु-अणु की प्राकृतिक स्वतन्त्रता के आधार पर आत्मा की परम शान्ति एवं स्थायी मुक्ति का विधान निर्दिष्ट किया है। दिगम्बर जैन श्रमण, उस मुक्ति के विधान का अनुशीलन करते हुए जीवन में उसे परिणति देते हैं; अतः 'जैन-ध्वज' भी उन्हीं अरहन्त, सिद्ध, आचार्य उपाध्याय एवं साधु-इन पाँच प्रकार के श्रमणों के प्रतीक के रूप में स्वीकृत है।

ध्वजारोहण एवं ऐसे ही अन्य सभी समारोह एवं अनुष्ठानों के पवित्र अवसरों पर श्रमणों की पावनता को आत्मसात् करने के लिए इन्हीं पाँच श्रमणों का स्मरण एवं वन्दन किया जाता है।'

यही कारण है कि धर्मध्वज को शिवपुर-पथ-परिचायक, दुःखहारक, सुखकारक, दयाप्रवाहक, भविजनतारक, कर्म-

विदारक, चिरसुख-शान्ति-विधायक आदि विशेषणों से सम्बोधित किया जाता है। कहा भी है - **'विश्व हितैषी वीर दुलारा, उड़े गगन में झण्डा प्यारा।'**

प्रश्न 12 - विधिनायक से क्या तात्पर्य है?

उत्तर - पञ्च-कल्याणकों में अलग-अलग अनेक तीर्थङ्करों की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित की जाती हैं, उनमें धातु की 9 इञ्च की एक प्रतिमा को मुख्य मानकर, समस्त पञ्च-कल्याणक की विधियाँ इसी के माध्यम से सम्पन्न होती हैं; इस कारण इस प्रतिमा को पञ्च -कल्याणक में 'विधिनायक' घोषित किया जाता है। गर्भ के समय प्रतिमा 'मञ्जूषा' में रखी जाती है; जन्म के समय प्रतिमा का 1008 कलशों द्वारा पाण्डुकशिला पर जन्माभिषेक होता है। इसी प्रतिमा को सुन्दर-सुन्दर सजीले वस्त्र पहनाते हैं; **दीक्षाकल्याणक में इसी प्रतिमा को दीक्षा-विधि के माध्यम से मुनि का स्वरूप प्रदान करते हैं।** केवलज्ञानकल्याणक के बाद इसी प्रतिमा को समवसरण में विराजमान करते हैं तथा मोक्ष-विधि भी इसी प्रतिमा पर दर्शायी जाती है। अन्य प्रतिष्ठा योग्य प्रतिमाओं पर संक्षेप में विधियाँ की जाती हैं। इसी प्रतिमा के चिह्न के आधार पर पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के नाम का निर्धारण किया जाता है। यहाँ विधिनायक भगवान श्री आदिनाथ (ऋषभदेव) हैं।

प्रश्न 13 - मूलनायक प्रतिमा किसे कहते हैं?

उत्तर - प्रत्येक मन्दिर की प्रमुख प्रतिमा को **मूलनायक** प्रतिमा कहा जाता है तथा मन्दिर का नामकरण मूलनायक प्रतिमा

के आधार से किया जाता है। यहाँ जिनमन्दिर के मूलनायक भगवान महावीरस्वामी हैं और उन्हीं के नाम पर **मङ्गलायतन विश्वविद्यालय** में स्थापित किये जा रहे मन्दिर का नामकरण है।

प्रश्न 14 – जिस प्रतिष्ठित प्रतिमा के सान्निध्य में सम्पूर्ण पञ्च-कल्याणक की विधि सम्पन्न होती है, उसे क्या कहते हैं?

उत्तर – प्रतिष्ठा-महोत्सव में इस पूर्व प्रतिष्ठित प्रतिमा का विशेष महत्त्व होता है। इस प्रतिष्ठित प्रतिमा के सान्निध्य में अथवा इनकी अध्यक्षता में ही समस्त विधियाँ सम्पन्न होती हैं; अतः इसे **विधि-अध्यक्ष** कहते हैं। पञ्च-कल्याणक के प्रारम्भ में इस प्रतिमा को जिनेन्द्र रथयात्रा में धूमधाम के साथ प्रतिष्ठा मण्डप लाया जाता है तथा इन्हीं की शरण में विधिनायक, मूलनायक तथा अन्य प्रतिष्ठेय प्रतिमाओं को रखा जाता है।

प्रश्न 15 – रत्न-वृष्टि का क्या महत्त्व है।

उत्तर – प्रत्येक तीर्थङ्कर के जन्म से 15 माह पूर्व से ही सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर द्वारा उनके जन्मस्थान के नगर में रत्नों की वर्षा होती है। इसी की सूचनार्थ हम भी पञ्च कल्याणकों में कुबेर के माध्यम से रत्न-वृष्टि करवाते हैं।

प्रश्न 16 – सोलह स्वप्नों का क्या महत्त्व है?

उत्तर – जिस दिन तीर्थङ्कर का जीव अपनी पूर्व पर्याय को

छोड़कर तीर्थङ्कर पर्याय में आता है, उसकी पूर्व रात्रि को तीर्थङ्कर की माता सोलह शुभस्वप्न देखती है – ऐसा ही नियोग है। वह इन स्वप्नों का फल तीर्थङ्कर के पिता से पूछती है और वे उसका शुभ फल बताकर घोषणा करते हैं – **'हे त्रिलोकीनाथ की माता! आपके गर्भ में तीन लोक के जीवों को मुक्तिमार्ग का सन्देश देनेवाला पुत्र जन्म लेनेवाला है।'**

– यह सुनकर माता को अतिशय आनन्द उत्पन्न होता है और इसी आनन्दातिरेक की अवस्था में उनके उदर में तीर्थङ्कर का जीव, गर्भ धारण करता है। उक्त सोलह स्वप्नों का वर्णन तथा फल प्रत्येक पञ्च–कल्याणक में प्रदर्शित किया जाता है।

प्रश्न 17 – गर्भकल्याणक के दिन घटयात्रा क्यों निकाली जाती है?

उत्तर – जिस प्रकार माता के गर्भ में तीर्थङ्कर का जीव आता है तो अष्ट देवियाँ उसके पूर्व से ही उनकी सेवा–सुश्रुषा के लिए आ जाती हैं तथा उनकी शुद्धि आदि सर्व कर्म करती हैं; उसी प्रकार जिस वेदी पर भगवान विराजमान होंगे, उस वेदी की शुद्धि, मन्दिर–कलश, शिखर, ध्वज आदि की शुद्धि भी गर्भकल्याणक के पावन अवसर पर सम्पन्न होती है। गर्भकल्याणक के साथ इस बाह्य शुद्धता का भावनात्मक सम्बन्ध है।

प्रतिष्ठा–मण्डप से जिनमन्दिर तक वेदीशुद्धि हेतु शुद्ध मन्त्रित जल, कलशों या घटों में लेकर जाते हैं, उन घटों को यात्रा में सौभाग्यवती स्त्रियाँ तथा कुमारी बालिकाएँ धारण करके चलती हैं।

इसे ही 'घटयात्रा' कहते हैं।

प्रश्न 18 – माता-देवी की चर्चा से क्या तात्पर्य है?

उत्तर – जिस माता के गर्भ में सम्पूर्ण जगत को दिव्यध्वनि द्वारा उपदेश देनेवाला तीर्थङ्कर का जीव विराजमान हो, उसके हृदय में कैसी उमङ्गें होती हैं तथा उस सम्यग्दृष्टि धर्मात्मा माता के कैसे आध्यात्मिक विचार होते हैं? – इनका प्रदर्शन इस चर्चा में कराया जाता है। इसमें अष्ट देवियाँ तथा छप्पन कुमारियाँ, माता से तत्त्वचर्चा करती हैं और माता अपने मुखारविन्द से उनका समाधान करती हैं – यही इस चर्चा का मार्मिक बिन्दु है।

प्रश्न 19 – माता-पिता, इन्द्र-इन्द्राणी, राजा-रानी आदि की क्या पात्रताएँ हैं?

उत्तर – जो प्रतिष्ठाकारक के प्रतिनिधि, पूजक, सुन्दर, सद्गुणवान, युवा, आभरण-भूषित, श्रद्धावान, निष्पाप, अशुद्ध भोजन-पानरहित होते हैं, वे इन पदों के योग्य होते हैं। अन्य तात्कालिक नियम, कार्य आदि उन्हें प्रतिष्ठाचार्य द्वारा दिये जाते हैं।

प्रश्न 20 – इन्द्रसभा और राजसभा का क्या महत्त्व है?

उत्तर – जब कोई तीर्थङ्कर जैसा महापुरुष, इस भूमण्डल पर अवतरित होता है तो सम्पूर्ण भूमण्डल उससे प्रभावित हो जाता है। स्वर्ग में देवता तथा मध्यलोक में राजा-चक्रवर्ती आदि अपने-अपने स्थान पर सभाओं में उन तीर्थङ्कर महापुरुष का गुणगान करते हैं तथा उनके गर्भ, जन्म आदि कल्याणकों में महोत्सव करने के सम्बन्ध में गहन मन्त्रणा करते हैं – यही इन्द्रसभा और राजसभा के माध्यम से प्रदर्शित किया जाता है।

प्रश्न 21 - नान्दी-विधान तथा इन्द्र-प्रतिष्ठा की विधि क्यों करायी जाती है?

उत्तर - 'नान्दी-विधान' - यह पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा का प्रारम्भिक मङ्गलाचरण माना गया है। इसके माध्यम से 'मङ्गल-कलश-स्थापना' के बाद भगवान के माता-पिता बननेवाले सद्‌गृहस्थों का गोत्र परिवर्तन कराया जाता है तथा उन्हें आचरण सम्बन्धी योग्य नियमों की जानकारी दी जाती है। इसी प्रकार 'इन्द्र-प्रतिष्ठा' के माध्यम से इन्द्र-इन्द्राणी बननेवाले गृहस्थों की इन्द्र-इन्द्राणियों के रूप में स्थापना की जाती है। इस विधि का इतना प्रभाव है कि सम्पूर्ण प्रतिष्ठाकाल में इन्द्र-इन्द्राणियों तथा माता-पिता को सूतक-पातक आदि नहीं लगते। इन्द्र-इन्द्राणियों तथा माता-पिता के इस रूप की जानकारी नगर की समग्र जनता को होवे - इस निमित्त से 'इन्द्र-शोभायात्रा' निकाली जाती है।

प्रश्न 22 - यागमण्डल-विधान क्यों कराया जाता है?

उत्तर - यागमण्डल विधान में पञ्च परमेष्ठी, जिनप्रतिमा, जिनमन्दिर, जिनवाणी (शास्त्र) और जिनधर्म - इन नव देवताओं की पूजन की जाती है। इस पूजन के माध्यम से समस्त देव-शास्त्र-गुरु का आह्वान किया जाता है तथा पूजन-विधान के माध्यम से यह भावना की जाती है कि देव-शास्त्र-गुरु! हम आपके सान्निध्य में यह पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा करना चाहते हैं, कृपया आप हमें आशीर्वाद देवें कि हम शुद्ध मन-वचन-काय से यह महान कार्य सम्पन्न करें।

प्रश्न 23 - पाण्डुकशिला का क्या महत्त्व है?

उत्तर - जन्मकल्याणक के अवसर पर जब सौधर्म इन्द्र अपने समग्र देवता परिवार के साथ जन्मकल्याणक का उत्सव मनाने

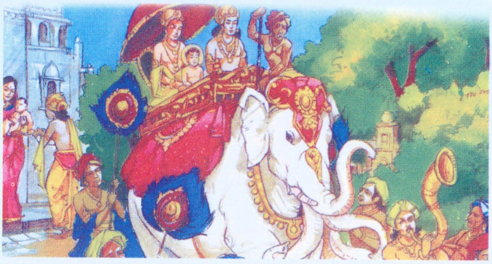

आते हैं, तब सर्व प्रथम वे शची इन्द्राणी से बाल तीर्थङ्कर को अनुनय करके प्राप्त करते हैं। पश्चात् जन्माभिषेक के उद्देश्य से बाल तीर्थङ्कर को ऐरावत हाथी पर विराजमान करके सुमेरुपर्वत पर ले जाते हैं। सुमेरुपर्वत पर पाण्डुकवन में उन बाल तीर्थङ्कर का 1008 कलशों द्वारा क्षीरसागर के जल से अभिषेक होता है। यह पाण्डुकशिला सनातन मानी गयी है; इसी पर अनन्त तीर्थङ्करों का जन्माभिषेक हो चुका है, हो रहा है और होता रहेगा।

प्रश्न 24 – ताण्डवनृत्य कब होता है और यह क्या सूचित करता है?

उत्तर – जन्माभिषेक के बाद जब तीर्थङ्कर को सौधर्म इन्द्र दैविक वस्त्र धारण कराता है और ऐरावत हाथी पर बैठकर वापस आता है तो उनकेअद्भुतरूप को देखकर स्वयं अचम्भित हो जाता है। भगवान के रूप को देखने के लिए सौधर्म इन्द्र, एक हजार नेत्र बनाता है और हर्षपूर्वक महा-ताण्डवनृत्य करता है, तब भी उसे तृप्ति नहीं मिलती है। इसी प्रकार की स्थिति सभी इन्द्रों और उपस्थित जन-समुदाय की होती है। यह क्रिया उत्साह एवं आनन्द की सूचक है।

प्रश्न 25 – पालनाझूलन का क्या महत्त्व है?

उत्तर – यह एक व्यावहारिक विधि है। जिस प्रकार लोक में

बालक को पालने में झुलाया जाता है; उसी प्रकार बाल तीर्थङ्कर को भी पालने में झुलाया जाता है। तीन ज्ञान के धारी बाल तीर्थङ्कर को पालने में झुलाते हुए कैसी आध्यात्मिक लोरीयाँ सुनायी जाती हैं, किस प्रकार उनका मन रञ्जायमान किया जाता है? – इसी उत्साहवर्धक विधि का नाम 'पालनाझूलन' है। पञ्च –कल्याणक प्रतिष्ठा में इस कार्यक्रम में सबसे अधिक उत्साह देखा जाता है और उपस्थित जन–समुदाय में प्रत्येक स्त्री–पुरुष, युवक–युवती, बालक–बालिका सभी बाल तीर्थङ्कर को पालने में झुलाना चाहते हैं।

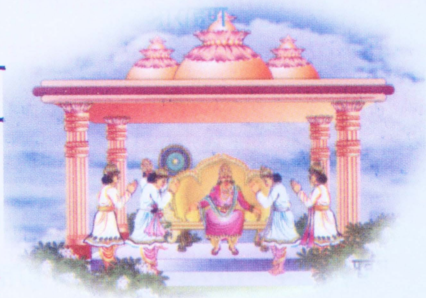

प्रश्न 26 – तीर्थङ्कर को वैराग्य कैसे आता है?

उत्तर – यह नियम है कि प्रत्येक तीर्थङ्कर के समक्ष दीक्षाकल्याणक के पूर्व ऐसी कोई न कोई घटना घटती है, जो उन्हें वैराग्य का निमित्त बन जाती है। जैसे, तीर्थङ्कर ऋषभदेव को नीलाञ्जना का नृत्य और तीर्थङ्कर महावीर को जातिस्मरण होना, निमित्त माना गया है। वैराग्य होने के बाद उसकी अनुमोदना करने हेतु ब्रह्मस्वर्ग से अखण्ड ब्रह्मचारी लौकान्तिक देवों का आगमन होता है। पश्चात् तीर्थङ्करकुमार की दीक्षाविधि सम्पन्न होती है।

प्रश्न 27 – क्या दीक्षा हेतु वनगमन करते समय देवताओं और मनुष्यों में कोई विवाद होता है ?

उत्तर – तीर्थङ्कर के पाँचों कल्याणक मनाने हेतु स्वर्ग से

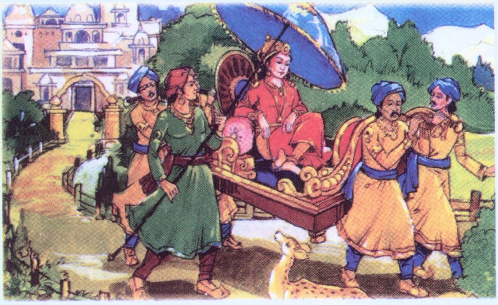

देवतागण आते हैं, दीक्षाकल्याणक के समय भी वे आते हैं। देवगण, पालकी में तीर्थङ्कर को ले जाने लगते हैं। उसी समय देव और मानवों में यह विवाद होता है कि पहले पालकी कौन उठाये? इस विवाद में दोनों तरफ से अपने-अपने पक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। अन्त में तीर्थङ्कर के पिता से यह समाधान होता है कि 'जो तीर्थङ्कर के साथ दीक्षा लेगा, वही पालकी उठाने का प्रथम पात्र होगा।'

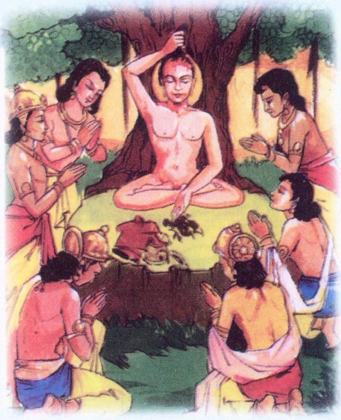

उस समय एक कारुणिक दृश्य भी उपस्थित होता है। देवता अपनी देवपर्याय के बदले में मनुष्यों से उनकी मनुष्यपर्याय थोड़ी देर के लिए माँगते हैं और मनुष्य किसी भी कीमत पर उसे स्वीकार नहीं करते; तब मनुष्यों को ही पालकी उठाने का प्रथम अवसर मिलता है क्योंकि मनुष्य ही संयम धारण के योग्य होता है; देव अपनी पर्यायगत अयोग्यता से संयम धारण के योग्य नहीं माने गये हैं।

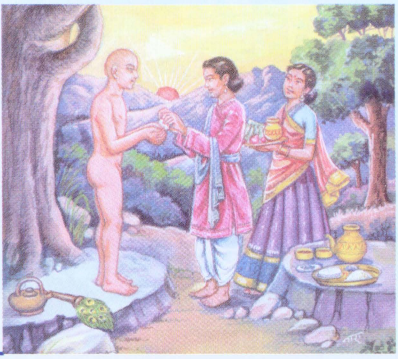

यह प्रसङ्ग मनुष्यपर्याय में आत्मभानपूर्वक संयम धारण करने की पावन प्रेरणा प्रदान करता है।

प्रश्न 28 - आहारदान का क्या महत्त्व है?

उत्तर - मुनिदीक्षा के उपरान्त बेला-तेला आदि उपवास करने के बाद मुनिराज का प्रथम पारणा आहारदान के माध्यम से होता है, उसकी विधि इस अवसर पर दिखायी जाती है। आहारदान के माध्यम से दानतीर्थ की प्रवृत्ति का उदय होता है तथा मुनियों की निर्दोष आहारचर्या का प्रदर्शन भी इसके माध्यम से जगत के सामने जाहिर होता है। इस अवसर पर वैराग्य तथा भावना का अद्‌भुत संगम होता है।

प्रश्न 29 - अङ्कन्यासविधि क्यों करायी जाती है?

उत्तर - अङ्कन्यासविधि के साथ-साथ तिलकदानविधि,

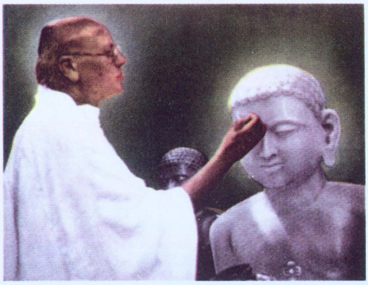

अधिवासनाविधि, स्वस्त्ययनविधि, श्रीमुखोद्‌घाटनविधि, नेत्रोन्मीलानविधि, प्राण-प्रतिष्ठाविधि, सूरिमन्त्रविधि आदि जिनबिम्ब-प्रतिष्ठा की मुख्य विधियाँ हैं, जिनका अतिशय महत्त्व है। 'सामान्यतया इन विधियों के मन्त्र सभी प्रतिष्ठा पाठों में समान है' - ऐसा पण्डित

नाथूलालजी शास्त्री ने प्रतिष्ठा प्रदीप में लिखा है।

इन संस्कार मन्त्रों की विधि करते समय प्रतिष्ठाचार्य अतिशय उज्ज्वल परिणाम धारण करते हैं, बल्कि अङ्गन्यास करते समय प्रतिष्ठाचार्य अपने अङ्गों में इन मन्त्रों की स्थापना करते हैं, पश्चात् मूर्ति में उन मन्त्रों का संस्कार करते हैं।

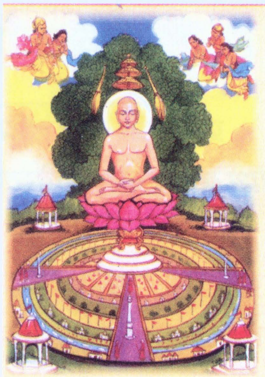

इनमें से सूरिमन्त्र आदि मन्त्र, प्राण-प्रतिष्ठा के सर्वोपरि मन्त्र हैं। यदि प्रतिष्ठा महोत्सव में नग्न दिगम्बर मुनिराज की अनुपस्थिति में प्रतिष्ठाचार्य स्वयं नग्न होकर, इन विधियों को विशुद्धभाव से करते हैं। (प्रतिष्ठा पाठ .... आधार)

प्रश्न 30 - दिव्यध्वनि का प्रसारण कैसे किया जाता है?

उत्तर - केवलज्ञान प्राप्ति के बाद समवसरण में तीर्थङ्कर भगवान को चतुर्मुख विराजमान किया जाता है और परदे के पीछे से दिव्यध्वनि का प्रसारण किया जाता है। यद्यपि तीर्थङ्कर भगवान की दिव्यध्वनि निरक्षरी होती है और वह गणधरदेव के माध्यम से खिरती है, तथापि भव्यजीवों की प्रेरणार्थ इस प्रकार उसका प्रदर्शन किया जाता है।

प्रश्न 31 - मोक्षगमन की विधि किस प्रकार दिखायी जाती है?

उत्तर - मोक्षकल्याणक के पूर्व तीर्थङ्कर प्रभु को उनके

सिद्धक्षेत्र के सूचक, पर्वत आदि स्थान पर विराजमान दिखाया जाता है। पश्चात् प्रभु, योग-निरोध करके समस्त कर्मों का अभाव करके मोक्ष पधार जाते हैं - इसकी सूचना हेतु विधिनायक प्रतिमा को वहाँ से उठाकर वेदी पर विराजमान कर देते हैं तथा भगवान के नख और केशों का अग्निकुमार जाति के देव, अग्नि-संस्कार करते हैं। यही मोक्षगमन की विधि है।

प्रश्न 32 - मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में जिनमन्दिर के साथ बनाये गये कीर्तिस्तम्भ की क्या विशेषता है?

उत्तर - इस कीर्तिस्तम्भ में तीर्थङ्कर परमात्मा, आचार्य भगवन्तों एवं ज्ञानी धर्मात्माओं की गौरवशाली परम्परा को चार भाषा में प्रदर्शित किया गया है। प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में आलेखित यह परम्परा सचमुच जैन शासन का कीर्तिस्तम्भ है।

इस गौरवशाली परम्परा से जन-जन को परिचित कराने के उद्देश्य से एवं भविष्य काल तक भी इस परम्परा का परिचय सभी को प्राप्त होता रहे - यह कीर्तिस्तम्भ का उद्देश्य है।

प्रश्न 33 - पञ्च-कल्याणक प्रतिष्ठा-महोत्सव से हमें क्या सन्देश प्राप्त होता है?

उत्तर - इस महोत्सव में तीर्थङ्कर परमात्मा के पाँच कल्याणकों के अलावा उनके पूर्व भवों का प्रदर्शन भी किया जाता है, जिससे ज्ञात होता है कि एक जीव किस प्रकार आत्माराधना की श्रेणियाँ चढ़ता हुआ मुक्ति जैसी सर्वोच्चदशा प्राप्त कर जगत वन्दनीय बन जाता है। साथ ही इस महोत्सव में जिनवाणी सेवक विद्वानों के द्वारा मुक्तिमार्ग का स्वरूप का एवं उसे प्राप्त करने के उपायों का प्रतिपादन भी होता है। इस प्रकार प्रेक्टीकल एवं

पञ्च-कल्याणक का एक-एक मन्त्र कल्याणकारी

– प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्रह्मचारी अभिनन्दनकुमार शास्त्री,
तीर्थधाम मङ्गलायतन अलीगढ़

'जिन-प्रतिमा जिनवर-सी कहिये' – महान विद्वान एवं अध्यात्मरस के रसिया कविवर भैया भगवतीदासजी का जिनेन्द्र प्रतिमा की महिमा बतानेवाला यह पद जब आद्योपान्त पढ़ते हैं, तब सहज ही यह ज्ञान हो जाता है कि समवसरण में विराजमान जिनेन्द्रभगवान एवं जिनमन्दिर में प्रतिष्ठापूर्वक विराजमान वीतरागी जिनेन्द्र प्रतिमा में कोई अन्तर नहीं है।

जिस प्रक्रिया द्वारा पाषाण से निर्मित अथवा अष्टधातु से निर्मित प्रतिमा, जिनेन्द्र भगवान के समान उपास्य एवं पूज्यपने को प्राप्त हो जाती है, उस प्रक्रिया को पञ्च-कल्याणक कहते हैं। वर्षभर में जैनधर्म के अनेक पर्व-महोत्सव आते हैं परन्तु पञ्च-कल्याणक महोत्सव जैनधर्म का सबसे महान पुण्य अनुष्ठान है, महा-माङ्गलिक महोत्सव है।

यह महा-महोत्सव मात्र जैन समाज के लिए ही आनन्दकारी हो – ऐसा नहीं है, अपितु जन-जन को आह्लादकारी है। अनेक धर्मप्रेमी जीव इसमें निहित क्रियाओं को देखकर, कई मुमुक्षु भाई इस महोत्सव में आये हुए विद्वानों द्वारा जिनेन्द्रभगवान द्वारा कही हुई वाणी को प्रवचनों तथा कक्षाओं के माध्यम से सुनकर तथा

अनेक साधर्मी भाई इस महोत्सव के अन्तर्गत होनेवाले अध्यात्मरस से भरपूर तात्त्विक एवं वैराग्यमय सांस्कृतिक कार्यक्रमों को देखकर तथा अनेक सङ्गीतप्रेमी भाई-बहिन इसके अद्भुत -प्रासङ्गिक एवं आध्यात्मिक मधुर भक्ति-गीतों को सुनकर अपनी-अपनी योग्यतानुसार धर्म प्राप्ति करते हैं। ऐसे महान प्रसङ्गों में शामिल होकर मन्दकषाय के परिणामों द्वारा पुण्य उपार्जन करना तो बहुत सामान्य बात है।

अनेक कोमलमति बालक भी इन मनमोहक कार्यक्रमों को देखकर धार्मिक संस्कारों को पुष्ट करते हैं तथा जो पहली बार ही पञ्च-कल्याणक महोत्सव देखने आते हैं, वे भी धार्मिक संस्कारों को प्राप्त करते हैं और धन्य हैं वे जीव, जो अपनी परिणति में से दुर्व्यसनों को दूर कर सदाचारमय जीवन का निर्माण कर, स्वाध्याय की प्रेरणा पा कर, जिनवाणी में अवगाहन कर, तत्त्वज्ञानरूपी ज्ञानगङ्गा में डूबकी लगा कर, स्वानुभव द्वारा आनन्दामृत का पान कर, जीवन को निहाल कर लेते हैं।

सर्व प्रथम तो पञ्च-कल्याणक की तिथि शुद्ध हो, अर्थात् पञ्चाङ्ग शुद्धि - तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण हों, मान -अभिमान न हो; **जहाँ हृदय में त्याग-तपस्या हो, निर्लोभपना हो, वहाँ विघ्न कैसा? वह कार्य तो निर्विघ्न ही होगा।**

पञ्च-कल्याणक महोत्सव की सबसे पहली क्रिया है - शान्तिजाप का प्रारम्भ। शान्तिजाप में जो मन्त्र आचार्यों ने बताये हैं, उनका उच्चारण शुद्ध हो - यह सर्व प्रथम ध्यान देने योग्य है। यद्यपि प्रतिष्ठा ग्रन्थों में सवा लाख जाप करने का उल्लेख है किन्तु यदि शुद्ध उच्चारण एवं संयमित जीवन और शुद्ध भोजनवाले भाई पर्याप्त संख्या में न मिलें तो जाप कम भी हो सकते हैं। मन्त्रों का

अद्भुत माहात्म्य है, जिनवाणी में मन्त्र का शुद्ध जाप करने से उत्कृष्ट पुण्य का बन्ध लिखा है। मन्त्र की शुद्धि और उसका शुद्ध उच्चारण अति आवश्यक है। श्रुतपञ्चमी पर्व की कथा में वर्णन आता है कि 'परमपूज्य धरसेनाचार्य ने अपने दो मुनिराज शिष्यों की परीक्षा हेतु दोनों को अलग-अलग दो मन्त्र दिये थे और कहा कि इनकी साधना करो। दोनों मुनिराजों ने साधना की और देखा कि कुरूप देवियाँ प्रकट हुईं; कारण आचार्यदेव ने परीक्षा हेतु एक मन्त्र में एक मात्रा अधिक रखी थी तथा दूसरे मन्त्र में एक मात्रा कम। तब दोनों मुनिराजों ने संशोधन कर मन्त्रों का जाप किया तो सर्वाङ्ग सुन्दरी देवियाँ प्रकट हुईं।'

जिनेन्द्रदेव का यह महामङ्गल महोत्सव, मात्र जनरञ्जन - मनोरञ्जन का विषय नहीं है; अपितु आत्मकल्याणक के साथ-साथ उस महान परम्परा को आगे बढ़ानेवाला है, जिसका उद्गम हजारों वर्ष पूर्व महान वीतरागी सन्तों द्वारा विधि-विधान के माध्यम से हुआ है। धातु या पाषाण से निर्मित प्रतिष्ठित हुए वीतराग जिनेन्द्र प्रतिमा के दर्शन -पूजन से भव्यजीवों को दिव्यध्वनि के अलावा वैसा ही धर्मलाभ प्राप्त होता है, जैसा समवसरण में विराजमान तीर्थङ्कर परमात्मा के दर्शन से प्राप्त होता है, इसीलिए तो कहा है - 'जिन-प्रतिमा जिनवर -सी कहिये।' ●

मङ्गलायतन विश्वविद्यालय में आयोजित
श्री आदिनाथ पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
के अन्तर्गत

विधिनायक भगवान श्री आदिनाथस्वामी

के जीवन चरित्र पर आधारित
(पाँच प्रश्न - पाँच पुरस्कार प्रतिदिन)

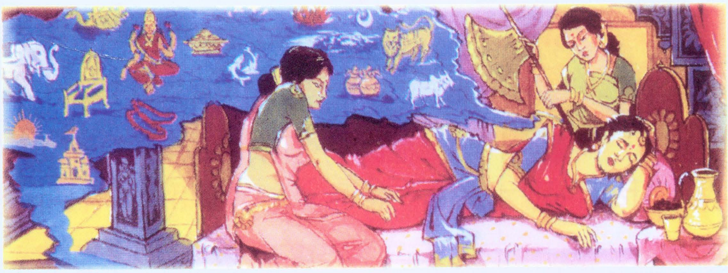

प्रश्न 1 : बालक ऋषभदेव की जन्मतिथि क्या है?

उत्तर : बालक ऋषभदेव का जन्म, चैत्र कृष्ण नवमी को हुआ था।

प्रश्न 2 : बालक ऋषभदेव का जन्म कहाँ हुआ था?

उत्तर : बालक ऋषभदेव का जन्म जम्बूदीप के भरतक्षेत्र की अयोध्यानगरी में हुआ था।

प्रश्न 3 : भगवान ऋषभदेव की आयु कितनी थी?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव की आयु 84 लाख पूर्व की थी।

प्रश्न 4 : भगवान ऋषभदेव के शरीर की ऊँचाई कितनी थी?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के शरीर की ऊँचाई 500 धनुष की थी।

प्रश्न 5 : भगवान ऋषभदेव का जन्म, काल के अनुसार कब हुआ था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का जन्म, सुषमा-दुषमा नामक तीसरे काल के अन्त में जब 84 लाख पूर्व + 3 वर्ष 8 माह पन्द्रह दिन बाकी रहे, तब हुआ था।

प्रश्न 6: भगवान ऋषभदेव के शरीर का वर्ण कौन-सा था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के शरीर का वर्ण स्वर्ण था।

प्रश्न 7 : भगवान ऋषभदेव का कुमार काल कितना था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का कुमार काल 20 लाख पूर्व का था।

प्रश्न 8: मुनि ऋषभदेव, दीक्षा लेने के बाद छद्मस्थ काल कितने वर्ष तक रहा?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव एक हजार वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में रहे।

प्रश्न 9 : मुनि ऋषभदेव ने दीक्षा कब ग्रहण की?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव ने चैत्र कृष्णा नवमी के दिन दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 10 : मुनि ऋषभदेव की दीक्षा के समय कौन-सा उत्तम नक्षत्र था?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव की दीक्षा के समय **उत्तराषाढ़ा** नक्षत्र था।

प्रश्न 11 : मुनि ऋषभदेव किस पालकी पर बैठकर वन में गये?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव सुदर्शना नामक पालकी में बैठकर वन में गये।

प्रश्न 12 : मुनि ऋषभदेव ने

किस वन में दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव ने सिद्धार्थ वन में दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 13 : मुनि ऋषभदेव किस वृक्ष के नीचे दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव ने न्यग्रोध, अर्थात् वट वृक्ष के नीचे दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 14 : मुनि ऋषभदेव ने दीक्षा लेकर कितने दिन का उपवास ग्रहण किया?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव ने दीक्षा के पश्चात् छह माह का उपवास ग्रहण किया।

प्रश्न 15 : मुनि ऋषभदेव को कितने वर्ष बाद किस वस्तु का आहार मिला?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव ने एक वर्ष बाद इक्षुरस का आहार ग्रहण किया।

प्रश्न 16: मुनि ऋषभदेव को प्रथम आहार किसने और कहाँ पर दिया?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव को प्रथम आहार, हस्तिनापुर में राजा श्रेयांस और राजा सोमदेव ने दिया।

प्रश्न 17 : मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान कब हुआ?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान फाल्गुन कृष्णा एकादश को हुआ।

प्रश्न 18: मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान किस समय हुआ था?

उत्तर : मुनि ऋषभदेव को केवलज्ञान पूर्वाह्न, अर्थात् प्रातःकाल हुआ।

प्रश्न 19 : भगवान ऋषभदेव कुल कितने गणधर थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव वृषभसेन आदि कुल 84 गणधर थे।

प्रश्न 20 : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में पूर्वों के ज्ञाता

कितने थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में पूर्वों के ज्ञाता 4150 थे।

प्रश्न 21 : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में कुल कितने अवधिज्ञानी मुनिराज थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में कुल नौ हजार अवधिज्ञानी मुनिराज थे।

प्रश्न 22 : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में कुल कितने केवली भगवन्त विराजमान थे?

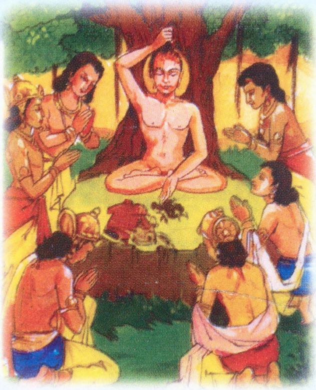

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में 20 हजार केवली विराजमान थे।

प्रश्न 23 : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में मनःपर्ययज्ञानी कितने मुनिराज थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में कुल 20750 मन:पर्ययज्ञानी मुनिराज थे।

प्रश्न 24 : भगवान ऋषभदेव के समवसरण में कितने वादी मुनिराज थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव समवसरण में 20750 वादी मुनिराज थे।

प्रश्न 25 : भगवान ऋषभदेव समवसरण में कुल कितनी आर्यिका माता थीं?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव समवसरण में कुल 350000 आर्यिका माताएँ थीं।

प्रश्न 26: भगवान ऋषभदेव समवसरण में कुल कितने श्रावक थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव समवसरण में कुल 3 लाख श्रावक थे।

प्रश्न 27 : भगवान ऋषभदेव समवसरण में कुल कितनी श्राविकाएँ थीं?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव समवसरण में 5 लाख श्राविकाएँ थीं।

प्रश्न 28: भगवान ऋषभदेव के समवसरण का कितना विस्तार था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के समवसरण का 12 योजन का विस्तार था।

प्रश्न 29 : भगवान ऋषभदेव की निर्वाण कब हुआ था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव को माघ कृष्ण 14 को निर्वाण हुआ था।

प्रश्न 30 : भगवान ऋषभदेव को निर्वाण कहाँ हुआ था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव को निर्वाण कैलाशपर्वत पर हुआ था।

प्रश्न 31 : भगवान ऋषभदेव का तीर्थ प्रवर्तन काल कब तक रहा?

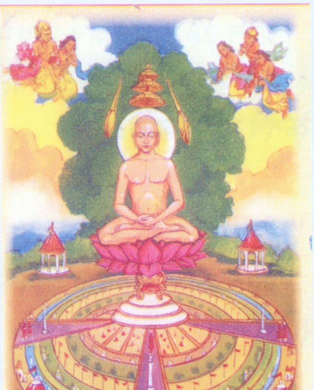

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का तीर्थ प्रवर्तन काल 50 लाख करोड़ सागरोपम+1 पूर्वाङ्ग प्रमाण काल तक रहा।

प्रश्न 32 : भगवान ऋषभदेव मोक्ष कब पधारे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव, सुषमादुषमा नामक तीसरे काल के अन्त समय में जब 3 वर्ष 8मास 15 दिन बाकी रहे, तब मोक्ष पधारे।

प्रश्न 33 : भगवान आदिनाथ के साथ कितने जीव मोक्ष पधारे?

उत्तर : भगवान आदिनाथ के साथ 10 हजार मुनि मोक्ष पधारे।

प्रश्न 34 : भगवान आदिनाथ किस आसन से मोक्ष पधारे?

उत्तर : भगवान आदिनाथ पदमासन से मोक्ष पधारे।

प्रश्न 35 : भगवान आदिनाथ दिन के किस समय मोक्ष पधारे?

उत्तर : भगवान आदिनाथ पूर्वाह्न के समय मोक्ष पधारे।

प्रश्न 36: भगवान आदिनाथ का मोक्ष गमन से पूर्व विहार कब बन्द हुआ?

उत्तर : भगवान आदिनाथ का योग निरोध से 14 दिन पूर्व विहार बन्द हुआ।

प्रश्न 37 : भगवान आदिनाथ के मुख्य श्रोता कौन थे?

उत्तर : भगवान आदिनाथ के मुख्य श्रोता चक्रवर्ती **भरत** थे।

प्रश्न 38: भगवान आदिनाथ के समवसरण में मुख्य आर्यिका कौन थीं?

उत्तर : भगवान आदिनाथ के समवसरण में मुख्य आर्यिका **ब्राह्मी** थीं।

प्रश्न 39 : मुनिराज आदिनाथ को केवलज्ञान कहाँ हुआ?

उत्तर : मुनिराज आदिनाथ को केवलज्ञान पुरिमतालपुर में शकटा वन में हुआ।

प्रश्न 40 : मुनिराज आदिनाथ ने केवलज्ञान से पूर्व कितने दिन का उपवास किया?

उत्तर : मुनिराज आदिनाथ ने केवलज्ञान से पूर्व तीन दिन का उपवास किया।

प्रश्न 41 : मुनिराज आदिनाथ के साथ कितने राजाओं ने दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : मुनिराज आदिनाथ के साथ चार हजार राजाओं ने दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 42 : राजकुमार ऋषभदेव को किस निमित्त से वैराग्य

हुआ?

उत्तर : राजकुमार ऋषभदेव को नीलाञ्जना नामक अप्सरा के निधन से वैराग्य उत्पन्न हुआ।

प्रश्न 43 : मुनिराज ऋषभदेव के दीक्षा वृक्ष की ऊँचाई कितनी थी?

उत्तर : मुनिराज ऋषभदेव के दीक्षा वृक्ष की ऊँचाई छह हजार धनुष थी।

प्रश्न 44 : मुनिराज ऋषभदेव ने किस वन में दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : मुनिराज ऋषभदेव ने प्रयागनगर के सिद्धार्थवन में दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 45 : राजकुमार ऋषभदेव ने दिन के किस समय दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : मुनिराज ऋषभदेव ने अपराह्ण काल में दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 46: राजकुमार ऋषभदेव ने किस तिथि को दीक्षा ग्रहण की?

उत्तर : राजकुमार ऋषभदेव ने चैत्र कृष्ण 9 को दीक्षा ग्रहण की।

प्रश्न 47 : भगवान ऋषभदेव कितने काल तक केवलज्ञान (अरहन्त) अवस्था में रहे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व तक केवली अवस्था में रहे।

प्रश्न 48 : राजा ऋषभदेव का राजभोग काल कितना रहा?

उत्तर : राजा ऋषभदेव का राजभोग काल 63 लाख पूर्व का रहा।

प्रश्न 49 : राजकुमार ऋषभदेव का कुमार काल कितना था?

उत्तर : राजकुमार ऋषभदेव का 20 लाख पूर्व का कुमार काल था।

प्रश्न 50 : भगवान ऋषभदेव का चिह्न क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का चिह्न **वृषभ** (बैल) है।

प्रश्न 51 : भगवान ऋषभदेव की जन्मराशि क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव की जन्मराशि धनु है।

प्रश्न 52 : भगवान ऋषभदेव का जन्म नक्षत्र क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का जन्म नक्षत्र **अभिजित** है।

प्रश्न 53 : भगवान ऋषभदेव का गर्भ नक्षत्र क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का गर्भ नक्षत्र **उत्तराषाढ़** है।

प्रश्न 54 : भगवान ऋषभदेव का गर्भ समय क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव रात्रि के अन्त समय गर्भ में आए।

प्रश्न 55 : भगवान ऋषभदेव की गर्भ तिथि क्या है?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव की गर्भ तिथि आषाढ़ कृष्ण द्वितीया है।

प्रश्न 56: भगवान ऋषभदेव की माता का क्या नाम था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव की माता का नाम मरुदेवी था।

प्रश्न 57 : भगवान ऋषभदेव के पिता का क्या नाम था?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के पिता का नाम राजा नाभिराय था।

प्रश्न 58 : भगवान ऋषभदेव के पिता कौन से कुलकर थे?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के पिता 14वें अन्तिम कुलकर थे।

प्रश्न 59 : भगवान ऋषभदेव के वंश का नाम बताओ?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के वंश का नाम **इक्ष्वाकुवंश** था।

प्रश्न 60 : भगवान ऋषभदेव का जीव कहाँ से चयकर तीर्थङ्कर हुआ?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव का जीव सर्वार्थसिद्धि नामक अनुत्तर

विमान से चयकर तीर्थङ्कर हुआ।

प्रश्न 61 : भगवान ऋषभदेव के जीव ने कौन-से भव में तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया?

उत्तर : भगवान ऋषभदेव के जीव ने वज्रनाभि चक्रवर्ती की पर्याय में अपने पिता वज्रसेन तीर्थङ्कर के समवसरण में तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध किया।

प्रश्न 62 : क्या भगवान आदिनाथ / ऋषभदेव जैनधर्म के प्रवर्तक हैं?

उत्तर – जैनधर्म कोई सम्प्रदाय नहीं है, वह तो वस्तु का स्वरूप है; अतः जैनधर्म का कोई प्रवर्तक नहीं है, क्योंकि वह अनादि-निधन, शाश्वत् सत्य है। भगवान ऋषभदेव जैनधर्म के तीर्थङ्कर एवं उपदेशक हैं।

मुनिदशा की अनादिकालीन सत्य वस्तुस्थिति

मुनिदशा होने पर सहज निर्ग्रन्थ दिगम्बरदशा हो जाती है। मुनि की दशा तीनों काल नग्न दिगम्बर ही होती है। यह कोई पक्ष अथवा बाड़ा नहीं, किन्तु अनादि सत्य वस्तुस्थिति है। कोई कहे कि 'वस्त्र होवे तो क्या आपत्ति है क्योंकि वस्त्र तो परवस्तु है, वह कहाँ आत्मा को रोकता है?'

इसका समाधान यह है कि वस्त्र तो परवस्तु है और वह आत्मा को नहीं रोकता, यह बात तो सत्य है परन्तु वस्त्र के ग्रहण की बुद्धि ही मुनिपने को रोकनेवाली है। मुनियों को अन्तर की रमणता करते-करते इतनी उदासीनदशा सहज हो गयी है कि उन्हें वस्त्र के ग्रहण का विकल्प ही उत्पन्न नहीं होता। *(- पञ्च कल्याणक प्रवचन, गुजराती, पृष्ठ 144)*

प्रकाशक :

तीर्थधाम मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट

अलीगढ़-आगरा मार्ग, सासनी-204216 (भारत)